महिला वैज्ञानिकों का पलायन कैसे रोकें?

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

पिछले चंद वर्षों में विज्ञान व टेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में 50 से ज़्यादा विश्वविद्यालय, उच्च शिक्षा व अनुसंधान संस्थान खुले हैं। हाल के दिनों में अकेले सीएसआईआर ने एक दर्ज़न से ज़्यादा निदेशक नियुक्त किए हैं, मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने 15 कुलपतियों की नियुक्ति की है और आंध्र प्रदेश में 5 और कुलपतियों की नियुक्तियां हुई हैं। इनमें से कितनी महिलाएं हैं? मेरा अनुमान है कि मात्र एक, या बहुत हुआ तो दो। विज्ञान शिक्षा व अनुसंधान के क्षेत्र में महिलाओं की बढ़ती संख्या के बावजूद विज्ञान के उच्च स्तरों पर उनकी भागीदारी नगण्य है। ऐसा क्यों हैं?

करंट साइन्स के 10 जनवरी 2011 के अंक में प्रकाशित दो पर्चे इस संदर्भ में प्रासंगिक हैं। पहला पर्चा है सीएसआईआर के मानव संसाधन समूह की कांता रानी और राजेश लुथरा का। इन्होंने 2004-08 की अवधि में सीएसआईआर द्वारा जीव विज्ञान में प्रदान किए गए अनुसंधान अनुदानों का विश्लेषण करते हुए यह सवाल उठाया है कि इनमें से कितने अनुदान महिलाओं को मिले।

उनका पर्चा दर्शाता है कि सीएसआईआर से अनुदान पाने के मामले में पुरुष व महिलाएं बराबर सफल रहे हैं (पुरुषों में सफलता 39 प्रतिशत और महिलाओं में सफलता 41 प्रतिशत रही)। उनका अनुमान है कि अन्य एजेंसियों के संदर्भ में भी स्थिति कमोबेश ऐसी ही होगी। मगर इसमें एक पैटर्न है। अनुदान हासिल करने वाली ये महिलाएं कहां कार्यरत हैं? इनमें से अधिकांश विश्वविद्यालयों में हैं, न कि अनुसंधान व विकास केंद्रों या राष्ट्रीय महत्त्व के संस्थानों से। इस रुझान का कारण समझना होगा।

रानी व लुथरा का विश्लेषण यह भी दर्शाता है कि महिला वैज्ञानिकों को मिलने वाले अनुदानों की पहुंच दिल्ली, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल तक सीमित है। तो इन राज्यों में ऐसी क्या बात है, जिससे अन्य 27 राज्य कुछ सबक ले सकें? यह एक समाज वैज्ञानिक पहेली है।

दूसरा पर्चा बैंगलोर स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज़ की अनीता कुरूप और आर. मैत्रेयी का 'बीयॉण्ड फेमिली एण्ड सोसाइटल एटीट्यूड टु रिटैन वीमेन इन साइन्स' (महिला वैज्ञानिकों को विज्ञान के क्षेत्र में बनाए रखने के संदर्भ में पारिवारिक व सामाजिक रवैये से आगे के विचार) है। इन्होंने 568 महिला वैज्ञानिकों से साक्षात्कार किए। इनमें से 312 अनुसंधान में जुड़ी थीं (अनुसंधानकर्ता महिला वैज्ञानिक) जबकि 182 किसी दीर्घावधि अनुसंधान में नहीं बल्कि स्कूल या कॉलेज में शिक्षण कर रही थीं, अनुसंधान में अस्थायी नियुक्ति पर थीं या परामर्श और प्रशासन का काम कर रही थीं (गैर-अनुसंधानकर्ता महिला वैज्ञानिक)। इसके अलावा 74 सुशिक्षित वैज्ञानिक थीं मगर काम नहीं कर रही थीं (गैर-कामकाजी महिला वैज्ञानिक)।

उक्त 568 में से अधिकांश विवाहित थीं (86 प्रतिशत अनुसंधानकर्ता, 88 प्रतिशत गैर-अनुसंधानकर्ता और 92 प्रतिशत गैर-कामकाजी)। फिर भी अनुसंधान में लगी महिलाओं का एक छोटा हिस्सा (14 प्रतिशत) ऐसा था जिसने अपने कैरियर को पटरी पर रखने के लिए अविवाहित रहने का फैसला किया था (इसकी तुलना अनुसंधान में लगे पुरुषों से की जा सकती है जिनमें से मात्र 2.5 प्रतिशत अविवाहित हैं)। इससे पता चलता है कि अधिकांश महिलाएं अपने कैरियर और पारिवारिक ज़िम्मेदारी के बीच ज़रूरी संतुलन बना पाती हैं।

एक और तथ्य उभरकर आया। यह हो सकता है कि एकल परिवारों और बच्चों की देखभाल की सुविधा न होने की वजह से गैर-अनुसंधानकर्ता महिला वैज्ञानिक विज्ञान में कैरियर को जारी न रख पाई हों, मगर उन्होंने यह भी बताया कि उन्हें नौकरी, संस्थान या मार्गदर्शक खोजने में दिक्कत हुई थी। यह दिक्कत गैर-अनुसंधानकर्ता महिला वैज्ञानिकों को ज़्यादा थी बनिस्बत अनुसंधानकर्ता महिला वैज्ञानिकों या गैर-कामकाजी महिला वैज्ञानिकों के।

अर्थात, महिलाओं के विज्ञान में न बने रह पाने में पारिवारिक ज़िम्मेदारी और काम में संतुलन बनाने के लिए ज़रूरी संस्थागत सहारे के अभाव के साथ-साथ अवसरों की कमी भी ज़िम्मेदार है। कुरूप व मैत्रेयी का कहना है कि "आंकड़े इस आम धारणा पर सवाल खड़ा करते हैं कि मात्र पारिवारिक कारक ही महिलाओं के विज्ञान में बने रहने की संभावना को प्रभावित करते हैं।"

इससे लगता है कि संगठनात्मक स्तर पर इस तथ्य को स्वीकार करना और उपयुक्त नीतिगत परिवर्तन करना मददगार होगा। इसके तहत परिसर में बच्चों व बुज़ुर्गों की देखभाल की सुविधा मुहैया कराने के अलावा काम के समय में लचीलेपन की भी दरकार होगी। काम के ज़रूरी घंटे पूरे करने के लिए यह संभव होना चाहिए कि वे जल्दी आकर जल्दी जा सकें या देर से आकर देर से जा सकें।

महिलाओं द्वारा विज्ञान छोड़ देने के अन्य कारण भी बताए गए हैं: हाशिए पर धकेला जाना, परेशान किया जाना, उपयुक्त परामर्शदाता व अनुकरणीय उदाहरणों की कमी, और निर्णायक पदों पर महिलाओं की कमी।

कहने का मतलब यह है कि घरेलू व महिला की जेंडरजनित भूमिका को दोषी मानने की बजाय, यह अध्ययन दर्शाता है कि उपरोक्त कारकों को आसानी से संबोधित किया जा सकता है। इसके लिए संगठनात्मक व नीतिगत स्तर पर संशोधनों की ज़रूरत है। अध्ययनकर्ता स्पष्ट करते हैं: "कई संस्थाओं में अनौपचारिक रूप से यह नीति है कि वे एक ही संगठन में पति-पत्नी दोनों को नियुक्त नहीं करते।...ऐसी नीति महिला वैज्ञानिकों के छोड़कर जाने का एक प्रमुख कारण हो सकती है।"

कितनी सही बात है। दरअसल, कई गैर-अनुसंधानकर्ताओं और गैर-कामकाजी महिला वैज्ञानिकों को इस नीति के कारण नुकसान उठाना पड़ा है। विज्ञान संस्थाओं के संचालन के अपने अनुभवों के आधार पर मैंने पाया है कि यह बात सच है। दरअसल आजकल मैं पुरज़ोर कोशिश करता हूं कि जब भी पति-पत्नी दोनों उपयुक्त अर्हता रखते हों और चाहते हों, तो दोनों को नौकरी मिले।

विज्ञान और टेक्नॉलॉजी मंत्रालय ने हाल ही में एक ताज़गी भरा नीतिगत उपाय अपनाया है जिसके तहत ऐसी महिला वैज्ञानिकों को विशेष अनुसंधान अनुदान व अस्थायी पद उपलब्ध कराए जाते हैं जिन्हें घरेलू कारणों से अपनी नौकरी छोड़नी पड़ी है। वास्तव में इसी तरह की एक योजना जीव वैज्ञानिक प्रोफेसर जी.पी. तलवार ने अपने तलवार फाउंडेशन में काफी समय पहले शुरू कर दी थी। इस तरह के पुनः प्रवेश अनुदान अच्छे हैं मगर छोटी अवधि के लिए ही हैं। यह संक्षिप्त अवधि पूरी हो जाने के बाद वह महिला वैज्ञानिक क्या करे? यदि इसी तरह की कोई दीर्घावधि योजना हो, जिसमें प्रदर्शन के आधार पर समय-समय पर नवीनीकरण की सुविधा हो, तो महिलाएं शायद फिर से अनुसंधानकर्ता की भूमिका में लौट सकेंगी।

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज़ के अध्ययनकर्ता द्वय के इस सुझाव पर विज्ञान अनुसंधान केंद्रों और नीतिकारों को संजीदगी से ध्यान देना चाहिए। जिस देश को अधिक से अधिक वैज्ञानिकों और अनुसंधानकर्ताओं की ज़रूरत है, वहां इस तरह का समर्थन महत्त्वपूर्ण हो जाता है। यह आंतरिक प्रतिभा पलायन को रोकने में बहुत मददगार होगा। ***(स्रोत फीचर्स)***

वर्ग पहेली 77 का हल

	सो		का	र्यि	की			फ
ध	ना	य	न		ट	क	सा	ल
ड़			कु			बू		क
क	ली		न	व	जा	त		
न		द		म		र		वे
		हि	म	न	द		र	वि
पा		य			म			लॉ
सं	तु	ल	न		क	ल	र	व
ग			म	शा	ल		ग	